**ओ३म्**

**‘स्वर्ग व मोक्ष का यथार्थ स्वरूप’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

प्रायः सभी मतों के अनुयायी व विद्वान किसी न किसी रूप में स्वर्ग की चर्चा करते हैं और मानते हैं कि इस पृथिवी से अन्यत्र किसी स्थान विशेष पर **‘स्वर्ग’** है जहां ईश्वर की कृपा से मनुष्य जीवन में अच्छे व श्रेष्ठ काम करने वाले मनुष्य जाकर सुखपूर्वक निवास करते हैं। इस मान्यता में कितनी सच्चाई है, इसकी खोज शायद ही कोई करता हो। स्वर्ग के प्रति यह मान्यता भिन्न-भिन्न मतों के आचार्यों, विद्वानों व उनके अनुयायियों ने अपने-अपने धर्म को महिमा-मण्डित करने व अपनी भ्रान्तियों के कारण की है। भ्रान्तियां न हो, इसके लिए यथार्थ ज्ञान की आवश्यकता होती है। यथार्थ ज्ञान का साधन ईश्वरीय ज्ञान वेद है। वेदों के आधार पर स्वर्ग का जो सत्य स्वरुप सामने आता है वह यह है कि **‘‘स्वर्ग नाम सुख विशेष भोग और उस की सामग्री की प्राप्ति का है।”** स्वर्ग की यह परिभाषा वेदों के मर्मज्ञ विद्वान महर्षि दयानन्द प्रदत्त है। स्वर्ग की इस परिभाषा पर विचार करने पर स्वर्ग का यथार्थ स्वरुप ज्ञात होता है। स्वर्ग मनुष्य वा उसकी जीवात्मा द्वारा सुख विशेष का भोग और सुख विशेष की सामग्री को कहते हैं। सुखों का भोग हम अपनी पांच ज्ञान इन्द्रियों के द्वारा करते हैं। हमारी यह इन्द्रियां सुखों का भोग कराने में उपकरण हैं जबकि सुखों का भोग जीवात्मा करता है। आंखों से हम दृश्यों को देखते हैं, कानों से शब्दों को सुनते हैं, नाक से गन्ध संघूते है, जिह्वा से रस का ज्ञान प्राप्त करने के साथ उसका भोग करते हैं एवं त्वचा से स्पर्श को करके सुख व दुःख का अनुभव करते हैं। इन पांच प्रकार के भोगों में जो सुख व प्रसन्नता देने वाले भोग होते हैं वह सब स्वर्ग की सामग्री कहलाते हैं। जिन भोगों को भोगने से मनुष्यों को सुख के स्थान पर दुःख होता है, उसे स्वर्ग न कहकर नरक की संज्ञा दी जाती है। अतः मनुष्य जीवन में जिसकी सभी इन्द्रियां बलवान हैं और जिसके पास सभी इन्द्रियों को सुख प्रदान करने की प्रचुर सामग्री है, वही व्यक्ति सुखी व स्वर्ग में है, कहा जाता है। इससे ज्ञात हुआ कि स्वर्ग मनुष्य जीवन में सुख की स्थिति को कहा जाता है।

संसार या ब्रह्माण्ड में सुखी मनुष्य, स्वर्ग में है, माना जा सकता है। इस व ब्रह्माण्ड की अन्य ऐसी पृथिवी से भिन्न कहीं कोई ऐसा स्थान नहीं है जिसे स्वर्ग की संज्ञा दी जा सके। स्वर्ग की यह स्थिति मनुष्य को कुछ तो अपने प्रारब्ध से प्राप्त होती है और कुछ उसे इस जीवन में ज्ञानपूर्वक वेद विहित शुभ कर्मों को करके प्राप्त होती है। इसके दो भाग किये जा सकते हैं। पहला भाग तो यह कि सुखों का भोग करने के लिए हमें अपनी इन्द्रियों व शरीर को स्वस्थ, निरोग व बलवान बनाना है। यदि हमारा शरीर निरोग, स्वस्थ व बलवान नहीं होगा तो फिर सुख की असीमित सामग्री भी हमारे लिए स्वर्ग नहीं हो सकती। एक मधुमेह के रोगी के लिए रसगुल्ला, चावल, आलू के व्यंजन, नाना प्रकार के मीठे फल, हलुआ व खीर स्वाद में सुख अवश्य पहुंचा सकते हैं परन्तु परिणाम में यह दुःख व नरक का कारण बनते है। इसी प्रकार से अन्य रोगों की भी स्थिति है। अतः स्वर्ग वा सुख भोगने के लिए शरीर का स्वस्थ, निरोग व बलवान होना आवश्यक है। इसके लिए मनुष्य को कुछ नियमों का पालन करना होता है। रात्रि 10 बजे सोना व प्रातः 4 बजे जागना आवश्यक है। जागने के बाद भी शौच से निवृत्त होकर संक्षिप्त ईश्वरोपासना कर शुद्ध वायु में भ्रमण, पश्चात व्यायायम, प्राणायाम करना व इसके बाद स्नान कर सन्ध्या व अग्निहोत्र करना सुख का भोग करने के लिए आवश्यक है। इन्हीं कर्मों का परिणाम वस्तुतः सुख होता है। इसके पश्चात उचित मात्रा में प्रातराश लेकर ज्ञानार्जन व व्यवसायिक कार्यों को पूर्ण मनोयोग से करना भी सुखी मनुष्य की दिनचर्या का भाग है। यथासमय उचित मात्रा में शुद्ध शाकाहारी पौष्टिक भोजन करना जिसमें रोटी, दाल, सब्जी, चावल, दही आदि पदार्थ लिये जा सकते हैं। कुछ घंटे बाद फलाहार करना भी स्वास्थ्य के लिए हितकर रहता है। सायंकाल सूर्यास्त से पूर्व अग्निहोत्र व सन्ध्या कर भोजन करना वैदिक धर्म में विहित है। पारिवारिक जनों से वार्तालाप व गृह कार्यों के लिए भी समय देकर रात्रि को समय पर विश्राम व शयन करना उचित व आवश्यक है। इससे शरीर स्वस्थ बनेगा और इन्द्रियों की कार्य क्षमता में वृद्धि होने से मनुष्य सुखों का भोग करने में समर्थ हो सकता है। यही सुख की स्थिति है। अनाप-शनाप व सामिष भोजन, मादक द्रव्यों का सेवन व इन्द्रिय सुख के असंयमित कार्यों को करके सुख की अनुभूति करना स्वर्ग का भोग नहीं है। इसका परिणाम तो शीघ्र ही दुःख के रूप में उत्पन्न होता है। इसको जानकर स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों का उचित मात्रा में उचित समय पर भोजन के रूप में ग्रहण करना व पूर्ण संयमित जीवन सहित शरीर को स्वस्थ रखने के सभी उपाय करना ही स्वर्ग व उसके भोग में सम्मिलित हैं। ऐसा करके अनुमान कर सकते हैं कि मनुष्य का वर्तमान जीवन सुखी होगा और इसके परिणामस्वरूप कोई दुःख नहीं भोगना होगा। ऐसा मनुष्य ही अपने आप को स्वर्ग के सुखों से युक्त अनुभव कर सकता है। यही स्थिति स्वर्ग की स्थिति है।

वैदिक संस्कृति वा जीवन पद्धति धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की अनुगामिनी है। यह जीवन पद्धति मनुष्य जीवन में अभ्युदय व मृत्यु होने पर मोक्ष को प्राप्त कराने वाली है। यह मोक्ष भी एक प्रकार से स्वर्ग की उच्चतम परिणति ही है जहां मनुष्य का जीवात्मा दुःखों से सर्वथा मुक्त होता है। मोक्ष में जीवात्मा जन्म व मरण से 1 परान्तकाल की अवधि तक के लिए छूट जाता है। इस परान्तकाल की अवधि 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों की होती है। मोक्ष की अवधि में जीवात्मा का अस्तित्व बना रहता है और यह शरीररहित अपने यथार्थ अस्तित्व से ही ईश्वर के सान्निध्य में रहकर मोक्ष का सुख भोगता है। मोक्ष के यथार्थ स्वरूप का वर्णन महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ में किया है। दर्शन में भी इसका विवेचन हुआ है। इसको जानने के लिए यह समझना है कि मनुष्य का जन्म उसके पूर्वजन्मों के कर्मों के आधार पर मिलता है। जन्म लेकर मनुष्य व प्राणी अपने पूर्व जन्मों के शुभ व अशुभ वा पाप व पुण्यरूपी कर्मों के सुख व दुःख रूपी फलों को भोगते हैं। शुभ कर्मों का फल सुख व अशुभ का दुःख होता है। यदि मनुष्य कोई अशुभ कर्म न करें तो उसे दुःख मिलने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। इसी प्रकार से यदि वह शुभ कर्मों को ही करे और उसमें आसक्त न हो अर्थात् उनके फल की इच्छा न करे, अपने सभी शुभ कर्मों के फलों को ईश्वर को समर्पित कर दे, उसी प्रकार जिस प्र्रकार हम सुपात्रों को दान करते हैं और परिणाम में दान लेने वाले से किसी फल की इच्छा नहीं करते, तो इन सब कर्मों के परिणाम से मनुष्य पुर्नजन्म का भागी न होकर मोक्ष का पात्र बन जाता है। मोक्ष का अर्थ छूटना होता है। यह छूटना जन्म वा मरण तथा दुःखों से होता है। मोक्ष के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य व कर्मों का कर्त्ता ईश्वरोपासक हो, यज्ञ व अग्निहोत्र का करने वाला हो, माता-पिता-आचार्यों का सेवक व सत्कार करने वाला, अन्य सभी शुभ कर्मों को भी करनेवाला और इसके साथ ईश्वरोपासना के प्रमुख फल सम्यक ध्यान व समाधि को सिद्ध किये हुए हो। समाधि में ईश्वर का साक्षात्कार व प्रत्यक्ष होता है। इससे मनुष्य को विवेक की प्राप्ति होती है। यह स्थिति अनुमानतः तब आती है जब मनुष्य के प्रायः सभी अशुभ कर्मों का भोग समाप्त हो गया हो। ईश्वर साक्षात्कार के बाद मृत्यु तक के जीवन को जीवन्मुक्त अवस्था कहा जाता है। मृत्यु होने के समय तक ऐसी जीवात्मा के जिन किन्हीं शुभ व अशुभ कर्म का भोग शेष रह जाता है उनके परिणामस्वरूप एक परान्तकाल की अवधि बीत जाने पर नये सर्गारम्भ वा सृष्टि की उत्पत्ति में मुक्त जीवात्मा का मनुष्य जन्म होता है। यह मोक्ष की अवस्था स्वर्ग नहीं अपितु स्वर्ग से भी ऊंची व सर्वोच्च उन्नत जीवन की अवस्था है। यह मोक्ष केवल ईश्वरभक्तों, ऋषियों वा योगियों, वेदभक्तों वा वेदाचार्यों तथा सद्कर्मों को करने वाले मनुष्यों को ही प्राप्त होता है। वेदेतर संसार की ऐसी कोई भी जीवन प्रणाली नहीं जिसमें मोक्ष प्राप्ति की संभावना हो। अतः जीवनोन्नति, स्वर्ग वा मोक्ष की प्राप्ति के लिए मनुष्य का वेद व वैदिक धर्म की शरण में आना परमावश्यक है। अनेक तर्कों से मोक्ष के स्वरूप व मोक्ष में जीवात्मा के सुख व आनन्द के भोग की अवस्था को सिद्ध किया जाता सकता है। विस्तार भय से इसे इस लेख में सम्मिलित नहीं कर पा रहे हैं। इतना कहना ही समीचीन है कि आनन्द से परिपूर्ण ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त मुक्त जीवात्मा सुखी व आनन्दित होगा, दुःखी किंचित नहीं हो सकता। यदि मनुष्य जीवन व जीवात्मा की परमगति है।

स्वर्ग व मोक्ष के बारे में समाज में मिथ्या धारणायें प्रचलित हैं। इसका निराकरण करने के लिए हमने इस संक्षिप्त लेख में प्रकाश डालने का प्रयास किया है। आशा करते हैं कि पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**